गुरु नानक:
जीवन प्रसंग

डॉ० महीप सिंह

गुरु नानक : जीवन प्रसंग

डॉ. महीप सिंह

गुरु नानक फाउण्डेशन
नयी दिल्ली

भूमिका

धर्म और आचरण की सही और पक्की नींव बचपन में ही रखी जाती है। अपने माता, पिता, अध्यापकों और सामाजिक वातावरण से ही बच्चे प्रारंभिक शिक्षा प्राप्त करते हैं।

गत कुछ वर्षों में सिख गुरुओं के जीवन और सिख धर्म से सम्बन्धित प्रचुर साहित्य प्रकाशित हुआ है, परन्तु बच्चों के लिए बहुत कम पुस्तकें लिखी गयी हैं।

गुरु नानक फ़ाउण्डेशन ने इस कमी को महसूस करके यह निश्चय किया है कि सिख धर्म के आदर्शों और महान गुरुओं के जीवन से सम्बन्धित पुस्तकों का प्रकाशन विविध आयु-वर्ग के बच्चों के लिए किया जाए। इस प्रकार की कुछ पुस्तकों का प्रकाशन पंजाबी और अंग्रेजी भाषाओं में किया जा चुका है।

गुरु नानक देवजी के प्रेरक जीवन-प्रसंगों पर आधारित यह पुस्तक डॉ. महीप सिंह ने हिन्दी में हमारे लिए विशेष आग्रह पर लिखी है। हमें पूरा विश्वास है कि इस पुस्तक से हिन्दी भाषा-भाषी बच्चे लाभान्वित होंगे। इस श्रृंखला में और पुस्तकें भी हिन्दी में प्रकाशित करने की हमारी योजना है।

इस पुस्तक को बच्चों और बड़ों ने बहुत सराहा है इसलिए लोगों की माँग पर इसे दोबारा प्रकाशित किया जा रहा है।

अपने कृपालु पाठकों से सुझावों का हम हार्दिक स्वागत करेंगे।

सतनाम सिंह

अवैतनिक महासचिव
गुरु नानक फाउण्डेशन
नयी दिल्ली

क्रम

सच्चे सौदे का व्यापारी

सभी माता-पिता यह चाहते हैं कि उनका पुत्र संसार के कामों में बहुत चतुर हो, वह बहुत-सा पैसा कमाए और अपने परिवार के लोगों को सुख दे। गुरु नानक जी के पिता, मेहता कालू भी यही चाहते थे।

परन्तु गुरु नानक का मन तो बचपन से ही ऐसे कामों में अधिक लगता था जो मनुष्य को परमात्मा की ओर ले जाते हैं, जिनसे समाज के दु:खी लोगों को सुख मिलता है। ऐसे लोग साधारण सांसारिक लोगों जैसे नहीं होते। ऐसे संत और महात्मा भूले-भटके संसार को सही रास्ता दिखाने वाले महापुरुष होते हैं।

गुरु नानक जी भी ऐसे ही महापुरुष थे।

सांसारिक कार्यों में उनका ध्यान न लगता देखकर उनके पिता ने सोचा कि उन्हें व्यापार में लगाना चाहिए। व्यापार में जब वे धन कमाएंगे तो, उनके मन में धन के प्रति और लोभ पैदा होगा। इस तरह वे संसार के साधारण लोगों की तरह ही जीना शुरू कर देंगे।

एक दिन उन्होंने गुरु नानक जी को बीस रुपये दिये। आज से पांच सौ वर्ष पहले बीस रुपये का मूल्य बहुत होता था। उन्होंने कहा— "बेटा नानक, लो ये रुपये। पास में ही चूहड़काणे की मंडी है। वहां चले जाओ और कुछ अच्छा-सा सौदा खरीदा लाओ।"

नानक जी ने पूछा— "पिताजी कैसा सौदा खरीदकर लाऊं?"

"खरा सौदा होना चाहिए।" पिता ने कहा— "जिससे तुम्हें खूब लाभ मिले।"

"अच्छी बात है पिताजी।" नानक जी ने सोचते हुए कहा— "मैं ऐसा सौदा ही खरीदूंगा।"

पिता कालू मेहता उनकी बात सुनकर बहुत प्रसन्न हुए। उन्होंने नानक जी के साथ उनके बाल मित्र बाला को भी भेज दिया।

गुरु जी और भाई बाला चूहड़काणे की मंडी की ओर चल दिये।

रास्ते में एक जंगल पड़ता था। वे उसमें से निकल रहे थे कि उन्हें साधुओं की एक मंडली मिल गयी। साधुओं ने गुरु जी की ओर देखा। उनके चेहरे पर बड़ा तेज चमक रहा था। उन्होंने सोचा, यह अवश्य किसी धनी व्यक्ति का बेटा है। वे बोले— "बच्चा, हम कई दिन से भूखे है, हमें भोजन करा दो। भूखों को भोजन कराने से बहुत लाभ होता है।"

"बहुत लाभ होता है।" नानक जी ने मन ही मन सोचा— "पिताजी ने कहा था कि ऐसा सौदा करना जिससे बहुत लाभ हो। यह भी तो बड़े लाभ का सौदा है।"

"महात्माजी।" उन्होंने साधुओं से कहा— "आप मेरे साथ चलिए। मैं आपको भोजन कराऊंगा और बहुत-सा लाभ कमाऊंगा।"

उनके साथी बाला ने मना किया— "नानक जी, आप यह क्या कर रहे हैं? आपके पिताजी ने खरा सौदा लाने के लिए कहा था।"

"भला इससे ज्यादा खरा सौदा और क्या होगा?" नानक जी ने बड़े आश्चर्य से पूछा।

उनके पास जितने भी रुपये थे, उन सभी रुपयों से उन्होंने भूखे साधुओं को भरपेट भोजन कराया और उनकी जरूरत की दूसरी चीजें उन्हें खरीद दीं।

वे घर की ओर वापिस मुड़ चले।

भाई बाला ने कहा— "आपने सारे रुपये साधु-संतों पर खर्च दिये हैं— आपके पिताजी बहुत नाराज होंगे।"

अपने गांव लौटकर नानकजी घर नहीं गये। वे एक पेड़ के नीचे बैठकर सोचने लगे।

बाला ने घर जाकर सारी बात कालू मेहता, माता तृप्ता और बहन नानकी को बताई। तीनों ही उस स्थान पर पहुंचे जहां नानक जी बैठे थे।

पिता ने गुस्से से पूछा— "तुम कौन-सा सौदा खरीदकर लाए हो?"

नानक जी ने कहा— "आपने कहा था, ऐसा सौदा खरीदना जो बहुत लाभ दे। मैंने अपनी समझ से बड़े लाभ वाला सौदा खरीदा है। मैंने आपके दिये रुपयों से भूखे साधुओं को भोजन करा दिया है। पिताजी, भूखों को भोजन कराने से बहुत लाभ होता है ना?"

उनकी बात सुनकर पिता को बहुत गुस्सा आया। उन्होंने नानकजी को बहुत डांटा।

नानकजी को डांट पड़ती देखक़र उसकी माता और बहन को बहुत दुःख हुआ। माता ने समझाते हुए कहा— "बेटा, तुम अपने पिता का कहना माना करो। तुम तो अपने आप में ही डूबे रहते हो। लोग समझते हैं कि तुम अपनी सुध-बुध गंवा बैठे हो।"

"मां, तुम लोगों की चिन्ता क्यों करती हो?" नानकजी ने कहा— "ये सभी लोग अज्ञान के अंधेरे में डूबे हुए हैं।"

माता ने कहा— "बेटा, तुम दुनिया की चिन्ता छोड़कर अपने घर की चिन्ता करो।"

नानकजी ने कहा— "मेरी अच्छी मां! सारा संसार लोभ और अहंकार की आग में जल रहा है। तुम चाहती हो कि मैं उनकी चिन्ता छोड़कर अपने परिवार की चिन्ता करूं। मां, क्या मैं परमेश्वर की इस सारी सृष्टि को ऐसे ही जलने दूं।"

भोली-भाली मां अपने इस अनोखे बालक की आंखों में झांककर उसे समझाने की कोशिश करती रही।

सच्चे जनेऊ की खोज

गुरु नानक जी जब कुछ बड़े हुए तो पिता कालू मेहता ने सोचा अब इनका यज्ञोपवीत संस्कार कर देना चाहिए। हिन्दुओं में जनेऊ पहनने का अधिकार केवल ऊंची जाति के ही लोगों को है। उपनयन या जनेऊ पहनने के संस्कार को व्यक्ति का दूसरा जन्म कहते हैं।

परन्तु गुरु नानक जी तो बचपन से ही ऊंच-नीच और जाति-पांत को नहीं मानते थे। उनके पिता ने अपने कुल-परोहित पंडित हरदयाल से पूछकर उनका जनेऊ संस्कार करने की तिथि निश्चित कर दी

इस अवसर पर उनके बहुत से सगे-सम्बन्धी और मित्र इकट्ठे हुए। घर में खूब चहल-पहल थी। शुभ महूर्त में पण्डित जी ने नानक जी बुलाया— "नानक जी, आकर मण्डप में बैठो।"

नानक जी इस चहल-पहल से पूरी तरह अलिप्त थे। वे भगवान के ध्यान में सदा डूबे रहते थे। जब पण्डित जी ने उन्हें बुलाया— तो उन्होंने बड़े भोलेपन से पूछा— "पंडितजी, आप मुझे मण्डप में क्यों बुला रहे हैं?"

"बेटे, आज तुम्हारा उपनयन संस्कार है।" पंडित जी ने कहा— "आज तुम्हें जनेऊ पहनाया जाएगा। यह देखो।" कहकर पण्डित जी ने उन्हें जनेऊ दिखाया।

नानक जी ने जनेऊ को अपने हाथ में लेकर देखा और बोले— "पंडित जी, यह जनेऊ तो सूत का बना हुआ है।"

"जनेऊ सूत का ही बनता है।" पंडित जी ने कहा।

"यह तो गंदा हो जाएगा।" नानक जी ने कहा।
"हां नानक जी, सूत का जनेऊ तो गंदा हो ही जाता है।" पंडित जी ने कहा।

"पंडित् जी।" नानक जी बोले— "यह तो टूट भी जाएगा।"
"तो क्या हुआ?" पंडित जी ने कहा— "तब दूसरा जनेऊ पहन लेना।"

नानक जी की उत्सुकता भरी आंखें पंडित जी के चेहरे पर जम गयीं— "पंडित जी, जब व्यक्ति मर जाता है और उसकी देह को जला दिया जाता है। उस समय उसके साथ यह जनेऊ भी जल जाता होगा।"

मंडप के चारों ओर उनके परिवार और सगे-सम्बन्धियों की भीड़ लगी हुई थी। सभी लोग बड़े आश्चर्य से नानक जी की बातें सुन रहे थे।

पंडित जी भी उनकी बातें बड़ी हैरानी से सुन रहे थे। वे बोले— "हां नानक जी, यह जनेऊ तो आग में जल जाता है।

"पंडित जी।" नानक जी के चेहरे पर आभा चमक उठी— "मैं ऐसा जनेऊ नहीं पहनूंगा।"

सभी लोग उनकी बात सुनकर सन्नाटे में आ गये। पंडित जी ने पूछा— "नानक जी, आप कैसा जनेऊ पहनेंगे?

नानक जी का मुख मण्डल एकदम गंभीर हो गया— "पंडित जी, आप मुझे ऐसा जनेऊ पहनाइए जो न गंदा हो, न टूटे, न जले। आपके पास ऐसा जनेऊ है?"

"ऐसा जनेऊ तो आज तक बना नहीं।" पंडित जी ने कहा।

"पर मेरे लिए आप ऐसा ही जनेऊ बनाइए।"

नानक जी बोले— "जिसमें दया की कपास हो, संतोष का सूत हो, संयम की गांठ हो और सच्चाई की पूरन हो। यदि आपके पास ऐसा जनेऊ है तो मुझे पहना दीजिए। इस प्रकार का जनेऊ न टूटता है, न गंदा होता है, न जलता है, न नष्ट होता है।"

नानक जी की ये बातें सुनकर पंडित जी सोच में पड़ गये। उन्हें लगा नानक जी ने उन्हें जनेऊ का ऐसा अर्थ समझा दिया है जो इतना कुछ पढ़ने-लिखने के बाद भी उन्हें नहीं मालूम था।

सभी लोगों को लगा जैसे उन्हें आज ज्ञान का नया प्रकाश प्राप्त हुआ है।

ना कोई हिन्दू ना कोई मुसलमान

पंजाब में एक शहर है, जिसका नाम है सुलतानपुर लोधी। पांच सौ वर्ष पहले यहां एक नवाब का शासन था, जिसका नाम था दौलत खान लोधी। गुरु नानक के बहनोई जयराम जी इस नवाब के पास नौकरी करते थे। कुछ दिनों के लिए नानक जी को उन्होंने अपने पास बुला लिया।

जब नानक जी सुलतान पुर पहुंचे तो जयराम जी उन्हें नवाब से मिलाने के लिए ले गये। नवाब ने उन्हें देखा तो देखता ही रह गया। उनका भोला-भाला चेहरा, कुछ पाने को व्याकुल आखें, कुछ बोलते से होठ, मस्तक पर चमकता हुआ तेज। यह सब देखकर नवाब बहुत प्रभावित हुआ। वह नानक जी से बोला—

"आप मेरे पास काम करना पसन्द करेंगे?"

"हां, यदि काम मेरी पसन्द का होगा तो करूंगा।" उन्होंने कहा।

"कैसा काम आपको पसन्द होगा?" नवाब ने पूछा।

"जिससे बहुत से लोगों का भला हो।" नानक जी का उत्तर था।

नवाब ने कुछ देर सोचा, फिर बोला, "आप हमारे मोदी खाने का काम संभालिए। यहां से अनाज बांटा जाता है। आप यह काम अच्छी तरह कर लेंगे।"

नानक जी ने यह काम करना स्वीकार कर लिया। वे अपने काम को बहुत अच्छी तरह से करते थे। परन्तु जो रसद उन्हें अपने लिए मिलती थी, उसे वे जरूरतमंदों में बांट देते थे।

एक बार नानक जी किसी को रसद तोल कर दे रहे थे। अपने तराजू से वे बारह बार तोल चुके। जब तेरहवीं तोलने लगे तो मुख से निकला 'तेरा'। तेरा का एक मतलब है— 'तरह' और दूसरा मतलब है— 'तुम्हारा' अर्थात परमात्मा का। बस नानक जी की रट 'तेरा' पर ही लग गयी। तेरा, तेरा कहकर उन्होंने न जाने कितनी रसद उसे तौल दी।

लोगों ने नवाब से शिकायत की कि नानक जी तो मोदीखाने को लुटाए दे रहे हैं। पर जब जांच-पड़ताल की गयी तो रसद पूरी निकली।

नानक जी पास में ही बहती हुई, वेईं नदी पर स्नान करने जाया करते थे। एक दिन वे स्नान करने के लिए गये और तीन दिन तक वापिस नहीं आए। घर में सभी को बहुत चिन्ता हुई। लोगों ने सोचा शायद नानक जी नदी में डूब गये हैं। पर उनकी बहन नानकी कहती थी— "मुझे विश्वास है कि मेरा भाई जीवित है। उसे तो अभी संसार में बहुत बड़े-बड़े काम करने हैं— भूली-भटकी जनता को सही रास्ता दिखाना है। वह भला कैसे डूब सकता है।"

तीन दिन बाद नानक जी एकाएक प्रकट हो गये। लोगों में खुशी की लहर दौड़ गयी। इन तीन दिनों में नानक जी समाधि में लीन रहे थे। उसी समाधि में उन्हें परमात्मा का प्रकाश अनुभव हुआ था। लोगों ने बड़े आश्चर्य से देखा कि उनका रूप-रंग पूरी तरह से बदला हुआ है। उनका मुख-मण्डल प्रकाश से चमक रहा है। उनकी आंखों से अद्भुत ज्योति फूट रही है और उनके मुख से लगातार निकल रहा है— "ना कोई हिन्दू ना कोई मुसलमान।"

उनकी इस बात से सभी लोग उन्हें भौंचक्के होकर देखने लगे। कट्टरपंथी हिन्दू और मुसलमान— दोनों ही उनकी बात सुनकर नाराज भी होने लगे। उन्होंने सोचा— हिन्दू-हिन्दू है और मुसलमान-मुसलमान है। नानक जी यह क्या कह रहे हैं कि न कोई हिन्दू है और न कोई मुसलमान।

शहर के काज़ी ने नवाब दौलत खान से उनकी शिकायत की। नवाब ने उनसे पूछा— "यह आपको क्या हो गया है? आप कहते हैं कि न कोई हिन्दू है न कोई मुसलमान है। इसका मतलब क्या है?"

नानक जी ने कहा, "मैं इंसान और इंसान में कोई भेद नहीं मानता। परमेश्वर के दरबार में मनुष्य की पहचान उसके अच्छे गुणों के कारण होती है, न कि हिन्दू या मुसलमान होने के कारण।"

नवाब के पास ही शहर का काजी बैठा था। उसने कहा, "क्या आप यह जानते हैं कि एक मुसलमान को खुदा की दरगाह में सिर्फ इसलिए जगह मिल पाती है, क्योंकि वह मुसलमान है।"

नानक जी ने कहा, "मैं यह नहीं मानता कि किसी को केवल मुसलमान होने के कारण ही खुदा की दरगाह में जगह मिल सकती है। अपने आपको मुसलमान कहने वाले ऐसे कितने हैं, जो सच्चे मुसलमान हैं? सच्चा मुसलमान अपने संतों द्वारा बताए धर्म का पालन करता है, वह गरीबों की मदद करता है, रब की रज़ा में खुश रहता है, सभी जीवों पर रहम करता है। ऐसा व्यक्ति ही मुसलमान कहलाने का अधिकारी है।"

उन्होंने फिर कहा, "दूसरों पर दया का भाव ही ऐसे मुसलमान की मस्जिद है, धीरज ही उसका मुसल्ला है जिस पर बैठकर वह नमाज पढ़ता है, ईमानदारी की कमाई ही उसकी कुरान है, बुरे कर्मों के प्रति लज्जा अनुभव करना ही उसकी सुन्नत है, शील ही उसका रोज़ा है, उसके अच्छे कर्म ही काबा हैं और सच्चाई ही उसका पीर है।"

काज़ी ने पूछा— "और पांच वक्त की नमाज के बारे में आप क्या कहते हैं?"

गुरु नानक जी ने कहा— "एक सच्चे मुसलमान की पहली नमाज़ उसकी सच्चाई है, ईमानदारी की कमाई उसकी दूसरी नमाज़ है, खुदा की बंदगी तीसरी नमाज़ है, मन को पवित्र रखना उसकी चौथी नमाज़ है और सारे संसार का भला चाहना उसकी पांचवीं नमाज़ है। हे काज़ी, जो ऐसी नमाज़ पढ़ता है वही सच्चा मुसलमान है।

उनकी बात सुनकर काज़ी बहुत सोच में पड़ गया। वह रोज़ नमाज़ तो पढ़ता था, पर उसका मन इधर-उधर भटकता रहता था। इतने में शाम की नमाज़ का वक्त हो गया। गुरु नानक जी सहित सभी लोग मस्जिद में आ गये। काज़ी खड़ा होकर नमाज़ पढ़ने लगा। जब नमाज़ पूरी हो गई तो नवाब ने पूछा— "आपने नमाज़ क्यों नहीं पढ़ी?"

गुरु नानक जी हंस दिये और बोले— "नमाज़ पढ़वाने वाले काज़ी का मन तो कहीं और था।"

काज़ी ने बड़े आश्चर्य से पूछा— "कहां था मेरा मन?"

गुरु नानक जी बोले— "काज़ी जी की गाय ने अभी बछड़ा दिया है। इनके घर के अहाते में एक कुआँ है। बछड़ा खुला हुआ था। काजी जी लगातार सोच रहे थे कि बछड़ा कहीं कुएं में न गिर जाए। इन्हें तो बछड़े चिन्ता सता रही थी। नमाज़ में इनका मन ही नहीं था।"

क़ाज़ी और नवाब बड़े आश्चर्य से उनकी ओर देखने लगे।

"और नवाब साहब," गुरु जी बोले— "आपका मन भी नमाज़ में नहीं था। जब आप नमाज़ पढ़ रहे थे, आपका मन काबुल में घोड़े खरीद रहा था। क्यों यह ठीक है ना?"

नवाब ने दुगने आश्चर्य से उन्हें देखा।

काज़ी और नवाब दोनों ही सोच रहे थे कि उनके मन की बात गुरु जी को कैसे पता लगी।

उसका नाम था मरदाना

सुलतानपुर में ही एक मिरासी मुसलमान गुरु नानक जी का मित्र बन गया था। उसका नाम था मरदाना। वह रबाब बहुत अच्छी बजाता था। गुरु नानक जी जब भक्तिभाव से गीत गाते तो वह उनके साथ रबाब बजाता था। गुरु जी के व्यक्तित्व से मरदाना इतना प्रभावित हुआ कि फिर वह उनका जीवन भर का साथी बन गया।

इस बीच गुरु नानक जी की ख्याति चारों तरफ फैल चुकी थी। कोई उन्हें बाबा नानक कहता, कोई नानक शाह फ़कीर और कोई गुरु नानक।

अब गुरु नानक जी ने घर-बार सब कुछ छोड़ दिया। इस समय भारत की जनता विदेशी आक्रमणकारियों द्वारा बुरी तरह सताई जा रही थी। ज्ञान का स्थान अंध-विश्वास ने ले लिया था। सारा समाज ऊंच-नीच और जाति-पांत में बुरी तरह बंटा हुआ था। धर्म के अगुआ-ब्रह्मण, काज़ी और योगी, साधारण जनता को धर्म के नाम पर लूट रहे थे। सरकारी कर्मचारी और छोटे-बड़े जमींदार जनता का खून चूस रहे थे। जनता की ऐसी दशा देखकर गुरु नानक जी मरदाना को साथ लेकर जनता के बीच निकल पड़े।

पहले गुरु नानक जी ने दक्षिण-पश्चिमी पंजाब की यात्रा शुरू की। यात्रा के दौरान गुरु नानक जी जहां भी रुकते, वे अपना डेरा बस्ती से बाहर ही लगाते और जो भी कंद-मूल खाने को मिल जाता उसी से अपनी भूख मिटा लेते। पर मरदाना को यह सब खाने की आदत नहीं थी। वह तो अच्छा और स्वादिष्ट भोजन करना चाहता था।

एक दिन जब गुरु नानक जी ने देखा कि मरदाना बहुत परेशान है तो उन्होंने उसे पास के गांव में जाने की आज्ञा दे दी। गांव में मरदाना की बड़ी आवभगत हुई। लोगों ने उसे स्वादिष्ट भोजन तो कराया ही, साथ में बहुत तरह के सूती, ऊनी और रेशमी कपड़े तथा

गरी, छुहारे, बादाम आदि अनेक प्रकार के स्वादिष्ट पदार्थ भी भेंट किए। लोगों की इस इस सेवा से मरदाना बड़ा प्रसन्न हुआ और सारे सामान की गठरी बांधकर गुरु जी की ओर चल दिया, अपने साथी को सामान से लदा देखकर गुरु जी मुसकराए और बोले—"अरे मरदाने, इतनी बड़ी गठरी कहां से बांध लाए?"

"गुरु जी!" मरदाना बड़े उत्साह से बोला— "अब कई दिनों तक हमें खाने-पीने और ओढ़ने-बिछाने की चिन्ता नहीं करनी पड़ेगी। गांव वालों ने मुझे खूब भर पेट खिलाया है और बहुत-सा सामान साथ बांध दिया है।"

उसकी यह बात सुनकर गुरु जी ने कहा— "मरदाने! यह तुमने अच्छा नहीं किया। हम तो गृहस्थ में रहकर त्याग का उपदेश देते हैं और तुमने त्याग का रास्ता अपना कर इतना लोभ किया।"

मरदाना बड़े संकोच से बोला— "पर गुरु जी, ये सभी चीजें तो लोगों ने खुद ही दी हैं। मैंने उनसे मांगी थोड़े ही थीं।"

"ये सब चीजें दूसरे लोगों को दे दो। जिन्हें इन की हमसे ज्यादा जरूरत है," गुरु नानक ने समझाते हुए कहा— "जिस तरह दान देने वाले को अपनी धर्म की कमाई में से ही दान देना चाहिए, उसी तरह दान लेने वाले को उतना ही दान लेना चाहिए जितने की उसे जरूरत है।"

मरदाना ने वे सभी चीजें लोगों में बांट दीं।

वह था सज्जन ठग

वह ठग तो बहुत बड़ा था परन्तु उसकी शक्ल-सूरत, रहन-सहन, बोल-चाल, चाल-ढाल सब बहुत अच्छे आदमियों जैसी थी। इसलिए जो लोग उसकी करतूतों को जानते थे उसे सज्जन ठग कह कर बुलाते थे। यह बात आज से लगभग पांच-सौ साल पहले की है। मुलतान के पास तुलम्बा नाम का एक शहर है। वह सज्जन ठग वहीं रहता था। शहर के बाहर सड़क के किनारे उसने एक मन्दिर बनवा रखा था और उसके साथ ही एक मस्जिद भी बनवा रखी थी। वह खुद सड़क के किनारे कभी हिन्दू साधुओं जैसा और कभी मुसलमान फ़कीरों जैसा भेस बना कर बैठ जाता था। उसके हाथ में सदा माला रहती थी। वह हमेशा माला के मनके फेरता रहता था और मुंह से धीरे-धीरे कुछ बुदबुदाता रहता था। उसके दूत उसी सड़क पर आगे जाकर आने वाले यात्रियों की टोह लिया करते थे और उस शहर की तरफ आने वाले यात्रियों का पूरा विवरण पहले ही उस ठग के पास पहुंचा दिया करते थे।

जब यात्री उसके पास से गुजरते तो वह उन्हें बड़े आदर और सत्कार से मिलता, उनकी बड़ी आवभगत करता और अपनी मीठी-मीठी तथा गूढ़ ज्ञान से भरी हुई बातों से उनके मन में अपनी सज्जनता का पूरा विश्वास बैठा देता। यदि यात्री हिन्दू होते तो वह उन्हें मन्दिर में ठहरा लेता और यदि यात्री मुसलमान होते तो वह उनके लिये मस्जिद में ठहराने का इन्तजाम कर देता। बड़ी रात तक वह उन यात्रियों के साथ परमात्मा की, धर्म की, ज्ञान की बातें करता रहता और फिर जब थके-मांदे यात्री नींद में सो जाते तो सज्जन ठग और उसके साथी मिलकर यात्रियों को मार डालते, उनकी लाशों को एक अन्धे कुएं में फेंक देते और उनका माल-असबाब लूट लेते।

एक बार यात्रा करते-करते गुरु नानक और उनका साथी मरदाना उस शहर की तरफ आ निकले। गुरु नानक का भव्य रूप और उनके चेहरे का तेज देखकर सज्जन ठग के दूतों ने सोचा यह जरूर कोई बहुत अमीर आदमी है। उन्होंने यह खबर सज्जन ठग के पास पहुंचा दी। बस वह इनके आने की राह देखने लगा।

जैसे ही गुरु नानक और मरदाना वहां पहुंचे उसने आगे बढ़कर उनका स्वागत किया। फिर वह उन्हें अपने साथ अन्दर ले आया और उनसे धर्म-कर्म की बातें करने लगा।

जब रात काफी हो गयी तो उसने गुरु नानक से कहा— "महाराज, अब आप लोग विश्राम कीजिये। आप दिन भर के थके-हारे हैं। कल आपको फिर लम्बी यात्रा पर जाना है।"

गुरु नानक ने उस ठग की कपट भरी आंखों में झांका। ठग कुछ घबड़ा-सा गया। आज तक किसी ने उसे इस तरह नहीं देखा था। गुरु नानक ने कहा— "आप तो बड़े धर्मात्मा व्यक्ति हैं। सोने से पहले आप परमात्मा का नाम अवश्य लेते होंगे।"

इस प्रश्न से वह कुछ और घबड़ाया। उसने कहा— "जी हां महाराज, मैं सोने से पहले कुछ देर तक परमात्मा को स्मरण करता हूं।"

"तो आओ आज मेरे साथ मिलकर परमात्मा को याद करो।" गुरु नानक ने उसे और उसके साथियों को अपने पास बैठाते हुए कहा।

सज्जन ठग और उसके साथी अजीब मुश्किल में पड़ गये। उनकी समझ में नहीं आ रहा था कि ये किस तरह के यात्री हैं। फिर भी उन्होंने सोचा, थोड़ी देर भजन-पूजन करने के बाद ये दोनों सो जाएंगे, तब हम लोग अपना काम कर लेंगे।

मरदाने ने रबाव बजाना शुरू किया और गुरु नानक एक शबद गाने लगे। उस शबद का भावार्थ था— "हे सज्जन, कासे का बर्तन ऊपर से कितना चमकता है परन्तु उसे जितनी बार धोया जाता है उसमें से मैल निकलती है। किसी हवेली को बाहर से कितना ही क्यों न संवारा जाए, उस पर कितनी ही चित्रकारी क्यों न की जाए परन्तु यदि वह अन्दर से पोली है तो वह जल्दी ही गिर जाएगी। बुगला पूरा सफेद होता है, वह नदियों के किनारे रहता है परन्तु उसका काम क्या है— जल में रहने वाले जीवों को खाना। क्या उसकी सफेदी या उसके एक टांग पर खड़े रहने की बात सोचकर कोई उसे पवित्र-आत्मा

कहेगा। देखो, सेमल का पेड़ कितना ऊंचा होता है। परन्तु सिर्फ ऊंचा होने का क्या लाभ, जबकि उसका फल फीका होता है और उसके पत्ते किसी काम नहीं आते।"

गुरु नानक के इस भजन ने उस ठग को अन्दर तक हिला दिया। उसके सारे पाप उसकी आंखों के सामने नाचने लगे। उसकी आत्मा बिलख उठी। वह उनके चरणों पर गिर पड़ा और फूट-फूट कर रोने लगा।

गुरु जी ने कहा— "हे सज्जन ठग, मैं जानता हूं तुमने बहुत से पाप किये हैं। तुमने सज्जनों जैसा भेस बना कर बहुत से लोगों की हत्या की है और उनका माल-असबाब लूट लिया है। अब तुम उन सारे कर्मों का प्रायश्चित करो।"

ठग ने कहा— "गुरु जी, आज आपने मुझे नया जीवन दिया है। आपकी वाणी सुनकर मेरी सोई आत्मा जाग उठी है। अब आप ही बताइए कि मैं अपने कामों का प्रायश्चित किस प्रकार करूं?"

गुरु नानक ने कहा— "लूट-मार करके जितनी सम्पत्ति तुमने जमा की है वह सब निर्धनों में बांट दो। आगे से एक सच्चे सज्जन जैसा जीवन व्यतीत करो। यही तुम्हारा प्रायश्चित है।"

उसने वैसा ही किया।

दूध और खून का भेद

एक बार यात्रा करते-करते गुरु नानक जी और मरदाना सैदपुर नामक गांव में आ निकले। यहां लालो नाम का एक बढ़ई रहता था। वह बहुत-भला व्यक्ति था। मेहनत की कमाई खाता था, भगवान का भजन करता था और साधु-संतों की सेवा करता था। गुरु जी उसके अतिथि बने। नगर में यह बात तुरन्त फैल गई कि ऊंची जाति के दो साधु एक गरीब और छोटी जाति वाले के घर का खाना खा रहे हैं।

उसी गांव में ऊंची जाति का एक धनवान व्यक्ति रहता था। उसका नाम था मलिक भागो। उसने अपने घर पर पितर-पक्ष के अवसर पर बहुत बड़ा भोज दिया था। उसमें उसने दूर-दूर से बहुत से साधु-संतों को बुलाया था। उसने गुरु नानक जी को भी उस भोज के लिए न्योता भेजा। पर गुरु जी ने उसके भोज में जाने से इन्कार कर दिया। उनका इन्कार सुनकर लोगों को बड़ा आश्चर्य हुआ। मलिक भागो के घर पर न्योता खाने के लिए तो सभी लोग बड़े लालायित रहते थे, क्योंकि वहां कई तरह के पकवान खाने को मिलते ते। न्योता लाने वाले ने पूछा— "क्यों महाराज, आप मलिक भागो के यहां जाने से इन्कार क्यों कर रहे हैं? क्या आपको ऊंची जाति वालों की बजाय नीची जाति वालों का साथ अच्छा लगता है?"

गुरु नानक ने कहा— "हां, तुम ठीक कहते हो। नीच जातियों में भी जो नीचे हैं और उनमें भी जो और नीचे हैं— मैं सदा उनके साथ हूं। मुझे बड़ी जाति वालों से कुछ लेना-देना नहीं है।"

नौकर ने जाकर मलिक भागो को गुरु नानक का यह उत्तर दिया तो वह बड़ा नाराज हुआ। उसने अपने नौकरों को आज्ञा दी यदि गुरु जी खुशी से न आएं तो उन्हें जबरदस्ती

ले आओ। उसकी आज्ञा पाकर नौकर गुरु जी के पास पहुंचे और चलने का आग्रह करने लगे। पहले तो वे तैयार नहीं हुए परन्तु उनके बहुत कहने पर वे कुछ सोचकर उनके साथ चल दिए। जब वे मलिक भागो की विशाल हवेली पर पहुंचे तो उन्हें भोजन परोसा गया। किन्तु उन्होंने खाने से इन्कार कर दिया।

मलिक भागो ने बड़े गुस्से से पूछा— "एक शूद्र के घर का भोजन करने में आपको तनिक भी अपत्ति नहीं हुई। मैं तो ऊंची जाति का आदमी हूं। साथ ही मेरे पास धन दौलत भी बहुत है। मैंने आज कितने ही तरह के पकवान बनवाए हैं। आप मेरे घर का भोजन करने से इन्कार क्यों कर रहे हैं?"

गुरु नानक जी ने कहा— "मैं ऊंच-नीच के भेद-भाव को नहीं मानता। मेरी दृष्टि में वह व्यक्ति ऊंचा है जो अपनी मेहनत की कमाई खाता है और उसी में से कुछ गरीबों को दान करता है। लालो अपने गाढ़े पसीने से कमाता है और उसी में से थोड़ा-बहुत निकालकर साधु-संतों की सेवा में लगाता है। तुम्हारी कमाई में मुझे गरीबों, असहायों और बेबसों के खून के छींटे नजर आते हैं।

कहते हैं कि इस अवसर पर उन्होंने एक हाथ में लालो की सूखी रोटी ली और दूसरे में मलिक भागों के बनाए हुए पकवान। जब उन्होंने अपनी दोनों मुट्ठियों को कसा तो सभी ने बड़े आश्चर्य से देखा कि लालो की रोटी से दूध टपक रहा है और भागो के पकवान से खून निकल रहा है।

लोगों ने समझ लिया कि मेहनत और ईमानदारी से कमाई सूखी रोटी में दूध का स्वाद होता है। जो पकवान बेईमानी से कमाए गये धन से बनाए जाते हैं उनमें गरीबों के खून की बू आती है।

अंध विश्वास दूर करो

एक बार यात्रा करते-करते गुरु जी और मरदाना हरिद्वार आ गए। वहां उन्होंने देखा कि लोग गंगा में खड़े होकर पूर्व दिशा में जल चढ़ा रहे हैं। गुरु जी ने एक व्यक्ति से पूछा— "आप यह जल किसे चढ़ा रहे हैं?"

वह बोला— "स्वर्ग में हमारे पितर बैठे हैं। उनकी आत्मा की शांति के लिए हम यह जल चढ़ा रहे हैं?"

गुरु जी मुस्कराये। उन्होंने गंगा में खड़े होकर पश्चिम दिशा में पानी फेंकना शुरू किया। यह देखकर लोगों को बड़ा आश्चर्य हुआ।

"अरे, आप पश्चिम दिशा में क्यों चढ़ा रहे हैं?" किसी ने पूछा।

"बात यह है," गुरु जी ने कहा— "मैं पश्चिम का रहने वाला हूं। वहां मेरे गांव में मेरा एक खेत है। इस वर्ष ठीक से वर्षा नहीं हुई है इसलिए मैं अपने खेत को पानी दे रहा हूं।"

सब लोग उनकी बात को सुनकर हंसने लगे। एक व्यक्ति बोला— "अरे क्या आप इतना भी नहीं समझते कि यहां से दिया हुआ पानी इतनी दूर नहीं पहुंच सकता।"

"अच्छा!" गुरु नानक ने कहा— "यदि मेरा पानी कुछ मील की दूरी तक नहीं जा सकता तो आपका दिया हुआ जल परलोक में बैठे पितरों तक कैसे पहुंच जाता है?"

उनकी बात सुनकर सब भौंचक्के से एक दूसरे के मुंह की ओर देखने लगे।

वहीं पर गुरु नानक धोखे से एक ब्राह्मण के चौके में चले गए। ब्राह्मण क्रोध से जल उठा और कड़ककर बोला— "आपने मेरा चौका भ्रष्ट कर दिया हैं। मैं इसे नित्य धोता

गुरु जी ने कहा— “पर, हे ब्राह्मण देवता, आपका चौका तो पहले से भ्रष्ट है। आपके अंदर क्रोध का भूत बैठा है जो नीची जातिवालों को देखकर जलने लगता है। आपके

अंदर कुबुद्धि की डोमनी, निर्दयता की कसाइन, और परनिंदा की मेहतरानी बैठी है। जब इतनी नीची जातियां तुम्हारे अंदर रहती हैं तो चौंके के बाहर लकीर भर खींच देने से पवित्रता कैसे उत्पन्न होगी।

उनकी बात सुनकर वह ब्राह्मण बहुत लज्जित हुआ।

कौन बसें : कौन उजड़े

यात्रा करते-करते गुरु नानक जी और मरदाना एक ऐसे नगर में से गुज़रे जहां एक धनी व्यक्ति के यहां पुत्र-जन्म की खुशियां मनाई जा रही थीं। दूसरे ही दिन उस बच्चे की मृत्यु हो गई। जहां एक दिन पहले गाना-बजाना था, वहीं अब रोना-पीटना मचा था। यह देखकर मरदाना ने गुरु नानक से पूछा— "गुरु जी क्या बात है कि मनुष्य कभी आनन्द में मग्न होता है और कभी दुख में डूब जाता है। आखिर इस जीवन का उद्देश्य क्या है?"

गुरु जी ने कहा— "ज्ञान के अभाव के कारण ही मनुष्य जीवन के सुखों में दुख को भूल जाता है। जब सुख चले जाते हैं तब दुख उसे बहुत भारी लगता है। परन्तु ईश्वर की आराधना करने वाला व्यक्ति न सुख में फूलता है और न दुख में दुखी होता है। वह दोनों स्थितियों में सन्तुष्ट रहता है।"

वहां से गुरु नानक मरदाना के साथ घूमते-फिरते एक गांव में पहुंचे। वहां के लोग उन्हें देखकर बहुत खुश हुए। उन्होंने उनकी बहुत आवभगत की। गांव के सभी स्त्री-पुरुषों ने उनकी बड़ी सेवा की और उनके उपदेशों को बड़े ध्यान से सुना। जब गुरु नानक उस गांव से विदा लेने लगे तो उन्होंने उस गांव के रहने वालों को आशीर्वाद दिया— "इस गांव में रहने वाले लोग उजड़ जाएं।"

फिर यात्रा करते-करते वे एक दूसरे गांव में पहुंचे। वहां के लोगों ने उनके साथ बिलकुल उल्टा व्यवहार किया। किसी ने उनका स्वागत नहीं किया। यहां तक कि किसी ने उन्हें पानी तक के लिए नहीं पूछा। गुरु नानक जी और उनका साथी मरदाना जल्दी उस

गांव से विदा हो गए जाते-जाते गुरु जी उस गांव के लोगों को आशीर्वाद देते हुए कहा—
"ये सब यहीं बसते रहें!"

उनके इस प्रकार के आशीर्वाद से मरदाना बड़े चक्कर में पड़ा। गुरु नानक जी के वचनों का रहस्य उसकी समझ में नहीं आया। उसने पूछ ही तो लिया— "गुरुजी, आपकी बात मेरी समझ में नहीं आई।"

गुरु जी ने पूछा— "कौन-सी बात, मरदाना?"

"यही—" मरदाना बोला—"जिस गांव में हमारी आवभगत हुई, जहां के लोगों ने हमारी सेवा की, आपके उपदेश सुने, उन्हें आपने उजड़ जाने का आशीर्वाद दिया। और जिस गांव में हमारा तिरस्कार हुआ, जहां के लोगों ने आपका उपदेश ग्रहण करना तो दूर आपको पानी तक के लिए नहीं पूछा, उन्हें आपने वहीं पर सदा बसते रहने का आशीर्वाद दे दिया। इसका क्या अर्थ है?"

मरदाना की बात सुनकर गुरु नानक जी मुसकराए। बोले—"मरदाने, बात बड़ी सीधी-सादी है। जो लोग अच्छे हैं, सेवा भाव वाले हैं उन्हें एक ही जगह पर नहीं रहना चाहिए। ये लोग उजड़कर नई-नई जगहों पर बसेंगे और वहां अपने गुणों का प्रसार करेंगे। परन्तु जो लोग बुरे हैं, जो दूसरों की सेवा करने की बजाय उनका तिरस्कार करते हैं और अपने स्वार्थों में ही डूबे रहते हैं, ऐसे लोगों को एक ही स्थान पर रहना चाहिए। यदि ये लोग फैलेंगे तो अपने आचरण से दूसरे लोगों को भी भ्रष्ट करेंगे।"

धन का इतना लोभ क्यों?

लाहौर में एक बड़ा अमीर व्यापारी रहता था। उनका नाम था दुनीचंद। उसे अपने धन का बड़ा घमंड था।

उसने अपने पिता का श्राद्ध करने की बड़े जोर-शोर से तैयारी की। इसके लिए उसने बहुत बड़े ब्रह्म भोज का आयोजन किया। ब्रह्मभोज के लिए उसने बहुत-से ब्राह्मणों, साधुओं, संतों को न्योता दिया।

उन्हीं दिनों गुरु नानक जी और मरदाना भी लाहौर आए हुए थे। जब दुनीचंद को यह मालूम हुआ कि गुरु नानक जी इस नगर में आये हुए हैं तो बड़े आदर से न्योता देने गया। वह बोला— "गुरुजी, मैं अपने पिता का श्राद्ध कर रहा हूं। इस अवसर पर मैं बहुत से ब्राह्मणों, साधुओं, संतों को भोजन करा रहा हूं। आप भी मेरे घर भोजन करने के लिए आइए।"

गुरुजी ने पूछा— "इतने लोगों को भोजन तुम क्यों करा रहे हो?"

दुनीचंद ने कहा— "गुरुजी, पुरोहित लोग कहते हैं कि जो पुन्य-दान मैं यहां करूंगा, वह परलोक में बैठे मेरे पितरों को मिलेगा। जो भोजन मैं ब्राह्मणों को दूंगा, उससे परलोक में बैठे मेरे पिता की भूख मिटेगी।"

गुरु नानक जी उसकी बात सुनकर मुसकुराये और उसके साथ हो लिये।

जब गुरुजी और मरदाना, दुनीचंद की हवेली पर पहुंचे, तो उन्होंने देखा कि हवेली के दरवाजे पर बहुत-सी झंडियां लटकी हुई हैं।

उन्होंने पूछा— "दुनीचन्द, तुमने ये झंडियां क्यों लटकाई हैं?"

उतने लाख की सम्पत्ति मेरे पास है।"

उसकी बात सुनकर गुरुजी फिर मुसकुराये।

जब श्राद्ध का आयोजन समाप्त हो गया और गुरुजी तथा मरदाना सेठ दुनीचंद से विदा लेने लगे तो गुरुजी ने उससे कहा— "दुनीचंद मैं तुम्हारे पास अपनी एक धरोहर रखना चाहता हूं। मैं तुम्हें अपनी एक सुई देता हूं। यह मुझे बहुत प्रिय है। इसे तुम अपने पास संभालकर रखलो। जब तुम और मैं परलोक पहुंच जाएंगे तो वहां मैं यह सुई तुमसे वापस ले लूंगा।"

उनकी बात सुनकर दुनीचंद बड़ा चकराया। वह सोचने लगा, परलोक में तो साथ में कुछ भी नहीं जाता। फिर यह सुई मैं कैसे ले लाऊंगा। वह बोला— "गुरुजी, आपकी बात मेरी समझ में नहीं आई। जब मैं मरूंगा, तो मेरी देह भी चिता में जल जाएगी। मेरी आत्मा के सिवा, परलोक में कुछ भी नहीं जाएगा। फिर आपकी सुई भला मैं कैसे वहां ले जाऊंगा?"

"देखो, अभी तुम कह रहे थे कि जो भोजन तुम यहां पुरोहित को खिला रहे हो, वह परलोक में तुम्हारे पिता के पास पहुंच जाएगा।"

"जी, गुरुजी।" दुनीचंद बोला

गुरु जी ने कहा— "जब एक छोटी सी सुई परलोक नहीं जा सकती, तब इतना भोजन परलोक में बैठे तुम्हारे पिता को कैसे मिलेगा?"

गुरु जी ने उसे समझाते हुए कहा— "मेरे भाई, भूखों को भोजन कराना, गरीबों की सेवा करना बहुत अच्छी बात है। परन्तु पुरोहितों को इस उम्मीद से भोजन कराना कि वह तुम्हारे पितरों के पास पहुंचेगा निरा भ्रम और अंधविश्वास है।"

सेठ दुनीचंद बड़े ध्यान से उनकी बातें सुन रहा था।

गुरुजी ने फिर कहा— "तुम्हें अपने धन का बड़ा अभिमान है। परन्तु तुम स्वयं कहते हो कि मरने के बाद कुछ साथ नहीं जाता। जब तुम यहां से एक छोटी-सी सुई भी अपने साथ नहीं ले जा सकते तो अपने धन का इतना मान क्यों करते हो?"

गुरुजी की बातें सुनकर दुनीचंद के अंदर की आंखें खुल गयीं। उसे अपने धन, अपने अभिमान की निरर्थकता का पता लग गया। उसने गुरुजी के चरणों पर झुककर कहा—"गुरुजी, मुझे बताइए कि मैं क्या करूं।"

"अपने धन का सदुपयोग करो। इससे निर्धनों की सहायता करो। इसे लोक-कल्याण के कामों में लगाओ"।

दुनीचंद ने ऐसा ही किया।

मोहर और कांटे का भेद

गुरु नानक एक नगर में अपना डेरा लगाए हुए थे। उस नगर के हज़ारों लोग नित्य-प्रति उनके दर्शन के लिए आते और उनके उपदेश सुनते थे। उसी नगर का एक दूकानदार भी नित्य गुरु जी के दर्शन करने और उपदेश सुनने के लिए जाया करता था। उसके एक पड़ोसी दुकानदार ने उससे एक दिन पूछा— "भाई, तुम रोज शाम को कहां जाते हो।"

"गुरु जी का उपदेश सुनने।" वह बोला

"मुझे भी साथ ले चला करो।" दूसरे ने कहा

पहला दूकानदार उसे साथ ले जाने के लिए राजी हो गया।

शाम को दूकान बंद करके दोनों दुकानदार गुरु जी के दर्शन करने चल दिये। रास्ते में वेश्याओं का बाज़ार पड़ता था। जब वे दोनों उस बाजार में से निकल रहे थे तो दूसरे दुकानदार की नज़र एक वेश्या पर पड़ गयी। उसका मन डोल उठा। वह पहले से बोला— "तुम गुरु जी के दर्शन करने के लिए जाओ। मैं तो इस वेश्या से मिलने जा रहा हूं।"

"यह बुरी बात है।" पहले ने समझाया। पर दूसरे ने उसकी बात पर ध्यान नहीं दिया और वेश्या के कोठे की ओर बढ़ गया। पहला गुरु जी के उपदेश सुनने के लिए चला गया।

अब दोनों शाम को इकट्ठे अपने घर से निकलते थे। वेश्याओं के बाज़ार तक दोनों साथ-साथ जाते थे। वहां आकर दूसरा वेश्या से मिलने चला जाता और पहला गुरुजी के दर्शन करने चला जाता। लौटते समय दोनों एक ही स्थान पर मिलते और फिर साथ-साथ घर वापस आ जाते।

एक दिन दूसरा जब वेश्या के कोठे पर चढ़ा तो वहां ताला लगा नज़र आया। वह बहुत निराश हुआ और लौटकर रोज के स्थान पर अपने साथी की प्रतीक्षा करने लगा। बैठे-बैठे उसने जेब से चाकू निकाला और वहां की धरती खुरचने लगा। खुरचते-खुरचते उसे मिट्टी में कोई चमकती हुई चीज़ दिखाई दी। मिट्टी हटाकर उसने देखा। वह एक सोने की मोहर थी। उसने सोचा यहां और भी मोहरें हो सकती हैं। वह अपने चाकू से जगह को लगातार खुरचता रहा। कुछ देर बाद उसे एक मटका दिखाई दिया। वह मन ही मन बड़ा खुश हुआ। उसका विश्वास था कि उस मटके में मोहरें भरी होंगी। उसने बड़ी आशा से वह मटका बाहर निकाला। पर जब उसने मटके का मुंह खोला तो उसकी आशा निराशा में बदल गयी। मटके में कोयला भरा हुआ था।

इतने में उसे पहला दुकानदार बड़ी परेशान हालत में आता हुआ दिखाई दिया। वह लंगड़ा-लंगड़ा कर चल रहा था। दूसरे ने पूछा— "क्यों भाई, क्या हुआ? बड़े परेशान दिखाई देते हो।"

पहले ने कहा— "क्या बताऊं। गुरु जी का उपदेश सुनकर बाहर निकला तो एक तेज कांटा पैर में घुस गया। कांटा तो निकल गया है, पर खून बन्द नहीं हुआ है और दर्द भी काफी है।"

दूसरे ने कहा— "मेरा भाग्य तुमसे अच्छा है। तुम गुरु के उपदेश सुनने जाते हो तो तुम्हें यह कष्ट मिला। मैं वेश्या के पास जाता हूं तो देखो मुझे सोने की मोहर मिली।"

यह सुनकर पहला और परेशान हो गया। पुण्य करने वाले को कष्ट मिले और पाप करने वाले को सोने की मोहर मिले, यह तो बड़ी अजीब बात हुई।

दोनों ने निश्चय किया— "आओ, गुरुजी के पास चलकर बात के रहस्य का पता लगाएं।"

दोनों दुकानदार गुरु नानक के पास पहुंचे। उनकी बात सुनकर गुरुजी मुसकुराये। उन्होंने कहा—"वेश्या के पास जाने वाले दूकानदार ने पिछले जन्म में किसी ज़रूरतमंद व्यक्ति को एक मोहर देकर उसकी सहायता की थी। उसके बदले में इसे इस जन्म में घड़ा भरकर मोहरें मिलनी थीं। पर इस जन्म में आकर यह बुरे कामों में फंस गया। इसलिए

इसका सोने की मोहरों से भरा हुआ मटका कोयले में बदल गया। परन्तु जो मोहर इसने दान की थी, वह इसे उसी तरह वापस मिल गयी।

पहले दुकानदार ने पूछा— "परन्तु गुरुजी, मैं तो अच्छे कर्म करता हूं। मुझे यह कष्ट क्यों मिला?"

गुरुजी मुसकुराये— "इसका कारण भी लगभग वैसा ही है। पिछले जन्म में तुम अपने ग्राहकों को बहुत ठगते थे और जिन जरूरतमंद लोगों को रुपया उधार देते थे, उनसे बहुत ज्यादा व्याज वसूल करते थे। उसके बदले इस जन्म में आकर तुमने अच्छे कर्म करने शुरू कर दिये। इस जन्म में तुम्हें सूली मिलनी थी। किन्तु तुम्हारे अच्छे कर्मों के कारण सूली दिन प्रति दिन छोटी होती चली गयी और एक कांटे के रूप में बदल गयी। आज तुम्हें वही कांटा चुभा है। इससे पिछले जन्म के तुम्हारे सभी पाप नष्ट हो गये हैं और तुम्हारा आगामी जीवन सुखमय बन गया है। इस तरह बुरे कर्मों से पूर्व जीवन के पुण्य भी सम्प्त हो जाते हैं और अच्छे कामों से पूर्व जीवन के पाप भी धुल जाते हैं।"

किधर नहीं खुदा का घर ?

गुरु नानक जी और मरदाना ने भारत के लगभग सभी मुख्य वैष्णव, शैव, जैन, बौद्ध और मुसलमान तीर्थ स्थानों की यात्रा कर ली थी। मरदाना मक्का-मदीना की यात्रा करना चाहता था। गुरु नानक जी ने उसके मन की बात जान ली और मरदाना को साथ लेकर वे मक्का-मदीना की यात्रा के लिए निकल पड़े। उन्होंने अपना वेश हाजियों जैसा बना लिया— नीले कपड़े, बगल में अपनी रचनाओं की पोथी, कंधे पर बंदगी करते समय जमीन पर बिछाया जाने वाला 'मुसल्ला', एक हाथ में पानी का कुज्जा, दूसरे हाथ में छड़ी। वे गुजरात के हिंगलाज बंदरगाह से दूसरे यात्रियों के साथ मक्का जाने वाले समुद्री जहाज़ पर चढ़े।

कुछ दिन की समुद्री यात्रा और फिर पैदल यात्रा करते हुए गुरु नानक और मरदाना मक्का पहुंचे।

कई दिनों की यात्रा करने के कारण सभी यात्री बहुत थक गये थे। इसलिए जिसको जहां जगह मिली वह वहीं थोड़ा-सा विश्राम करने के लिए लेट गया। गुरुजी भी लेट गये। संयोग से उनके पैर उस ओर थे जिधर 'काबा' था और जिसकी ओर मुंह करके लोग नमाज़ पढ़ते हैं।

सुहब-सुबह किसी ने बड़े गुस्से में आकर उन्हें ठोकर मारी, "अरे तुम कौन हो? क्या तुम्हें इतना भी पता नहीं कि काबा की तरफ पैर करके नहीं सोया जाता....काबा तो खुदा का घर है।"

गुरुजी की आंखें खुलीं। उन्होंने बड़े शान्त भाव से कहा— "भाई, नाराज़ क्यों होते हो। तुम मेरे पैर उस तरफ कर दो जिधर खुदा का घर नहीं है।"

उस व्यक्ति'ने बड़े गुस्से से गुरुजी के पैर उठाकर दूसरी तरफ कर दिये। परन्तु उसे बहुत आश्चर्य हुआ, जब उसने देखा कि काबा भी उसी तरफ है, जिधर गुरुजी के पैर हैं।

वह व्यक्ति थोड़ा चकराया। उसने फिर उनके पैर उठाये और उन्हें दूसरी तरफ कर दिये। परन्तु इस बार फिर काबा घूमता हुआ उसी ओर नज़र आया।

एकाएक गुरुजी की कही बात का भेद उसके सामने स्पष्ट हो गया। गुरुजी ने कहा था— "तुम मेरे पैर उस तरफ कर दो, जिधर खुदा का घर न हो। पर खुदा का घर किस

तरफ नहीं है। वह तो सभी स्थानों पर बसता है। उसका घर हर दिशा में है, हर ओर है।"

मक्का-मदीना में गुरु नानक जी की भेंट अनेक मुसलमान मौलवियों और फ़कीरों से हुई। उनमें से एक ने पूछा— "हे खुदा के नेक बंदे, आप हमें यह बताइए कि हिन्दू बड़ा है या मुसलमान।"

गुरुजी कहा— "कोई व्यक्ति हिन्दू या मुसलमान होने से बड़ा या छोटा नहीं होता। हर व्यक्ति के कर्म ही उसे बड़ा या छोटा बनाते हैं। इस समय ना हिन्दू अच्छे कर्म कर रहे हैं, ना मुसलमान।"

अपनी इस यात्रा में गुरुजी और मरदाना बगदाद भी गये। फिर वहां से अफ़गानिस्तान होते हुए भारत वापस आये।

दूध का भरा कटोरा और चमेली के फूल

मक्का, मदीना और बगदाद की यात्रा करते हुए गुरु नानक जी और मरदाना अपने देश की ओर मुड़े। रास्ते में मुलतान शहर पड़ा। गुरु जी ने शहर के बाहर एक बड़े पेड़ के नीचे अपना डेरा डाल दिया।

उस समय मुलतान पीरों, फ़कीरों, संतों, संन्यासियों का बहुत बड़ा केन्द्र था। इस नगर में बड़े-बड़े पीर-फ़कीर और उनके चेले रहते थे।

जब उन्हें पता लगा कि गुरु नानक और मरदाना शहर के बाहर एक पेड़ के नीचे अपना डेरा डाले हुए हैं तो वहां के बड़े पीर ने दूध का एक पूरा भरा हुआ कटोरा उनके पास भेजा। कटोरा लेकर आने वाला व्यक्ति बोला— "हमारे पीर साहब ने यह दूध से भरा कटोरा आपके पास भेजा है।"

गुरुजी ने उस कटोरे को ध्यान से देखा। वह ऊपर तक भरा हुआ था। उसमें और दूध डालने की कोई जगह नहीं थी। यह देखकर वे मुसकुराये। बिना कुछ बोले उन्होंने इधर-उधर देखा। पास में ही चमेली के फूलों का एक पौधा था। गुरुजी ने चमेली के दो फूल तोड़े और उन्हें दूध के ऊपर रख दिया।

वे बोले— "भई, दूध का कटोरा भेजने के लिए पीर साहब से हमारा शुक्रिया कहना। अब आप उन्हें जाकर मेरी ओर से यह कटोरा दे दीजिए।"

कटोरा लेकर आने वाला व्यक्ति बिना कुछ और बोले दूध से भरा कटोरा, जिस पर चमेली के दो फूल तैर रहे थे, लेकर वापस चला गया।

पास बैठा मरदाना यह सब कुछ देख रहा था। दूध से भरा कटोरा देख कर वह मन ही मन बहुत खुश हुआ था। परन्तु कटोरा उसी तरह वापस जाते देखकर उसे बड़ी निराशा हुई। उसने पूछा—

"गुरु जी, मेरी कुछ समझ में नहीं आया। पहली बात तो यही मेरी समझ में नहीं आयी कि मुलतान के बड़े पीर ने आपके पास दूध से भरा कटोरा क्यों भेजा? दूसरी बात, आपने दो चमेली के फूल रखकर उसे वापस क्यों कर दिया?"

गुरु जी उसकी बात सुनकर हंसे और बोले— "भाई मरदाने, पीर साहब का दूध से भरा कटोरा भेजने का मतलब यह था कि इस नगर में पीर-फ़कीर इस तरह भरे हुए हैं, जैसे इस कटोरे में दूध। जैसे इस कटोरे में और दूध नहीं आ सकता वैसे ही इस नगर में किसी और साधु-संन्यासी के लिए जगह नहीं है।"

"और आपने चमेली के फूल डालकर वह कटोरा वापस क्यों कर दिया? आपका मतलब क्या था?" मरदाने ने पूछा।

"हमारा मतलब था—" गुरु जी ने समझाते हुआ कहा— "हम इस नगर में इसी तरह रहेंगे जैसे ये फूल इस दूध के कटोरे पर हैं। हमारे कारण किसी को कोई कष्ट नहीं होगा।"